वेदान्त आश्रम एवं मिशन की मासिक ई - पत्रिका

वेदान्त पीयूष

वर्ष २४ अप्रैल - २०२४ प्रकाशन - ०४

सम्पादिका :

स्वामिनी अमितानन्द सरस्वती

प्रकाशक

वेदान्त आश्रम,

ई - २९४८, सुदामा नगर

इन्दौर - ४५२००९

Web : https://www.vmission.org.in

email : vmission@gmail.com

विषय सूचि

अप्रैल 2024

अमनस्वान्न मे दुःख रागद्वेषभयादयः।
अप्राणो ह्यमनाः शुभ्रः इत्यादि श्रुतिशासनात्।

(श्लोक - २३)

मैं मन नहीं हूं, इसलिए दुःख, राग, द्वेष और भय इत्यादि भी मेरे नहीं है। 'मैं अप्राण, अमन तथा शुद्ध हूं' यह श्रुति भी बताती है।

सन्देश
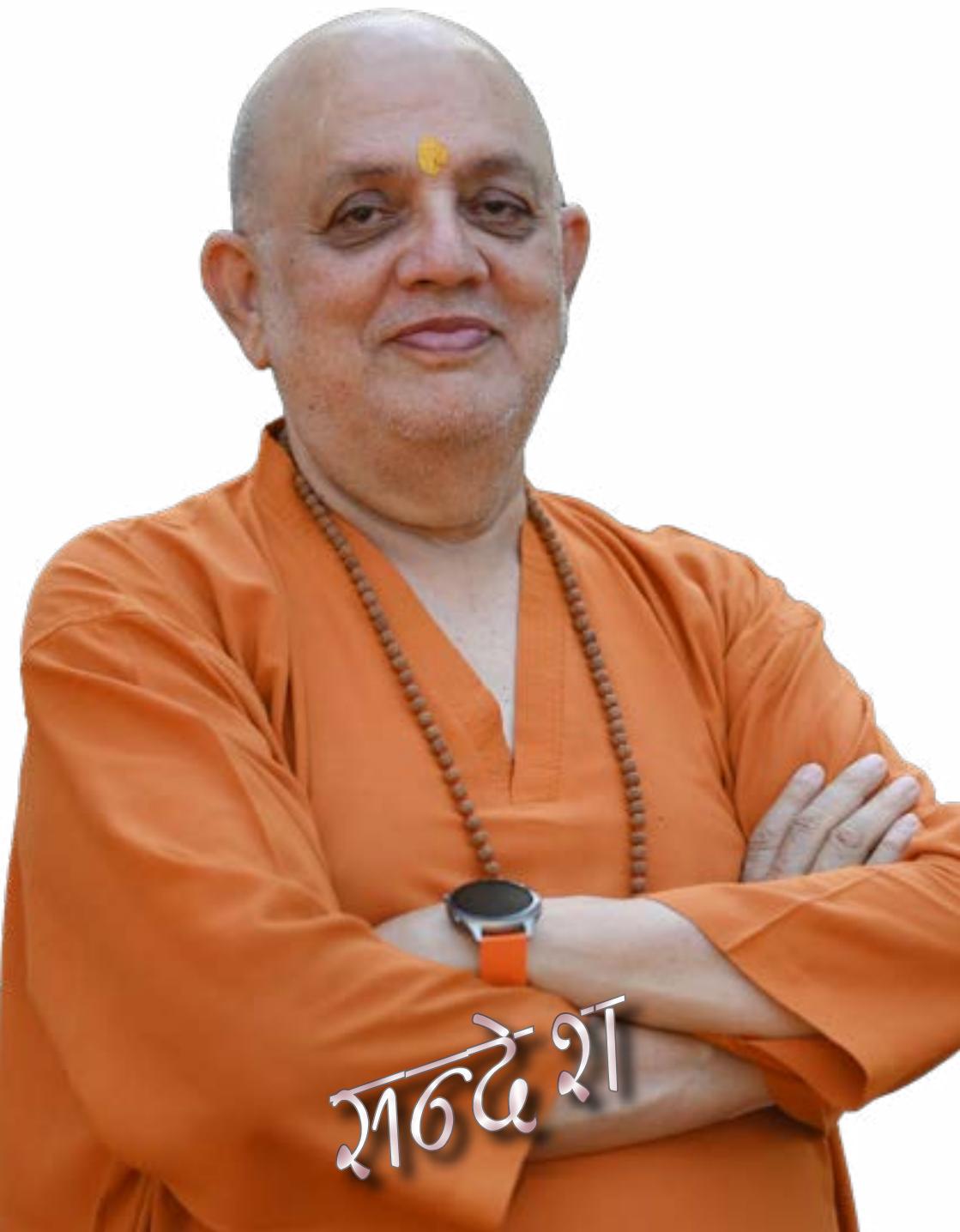
स्थितप्रज्ञ

स्थितप्रज्ञ के लक्षण में भगवान ने बताया कि जिसका मन शान्त और प्रसन्न है, उसका ही चित्त अपने ज्ञान में समाहित हो सकता है। चित्त की समाहित स्थिति होने में व्यवधान अपने व्यक्तिगत राग-द्वेष और पसंद-नापसंद होना है। यही व्यक्ति के चित्त को बाह्य विषयासक्त करके बहिर्मुख बनाए रखता है। ऐसे व्यक्ति को भगवान् अयुक्त अर्थात् योगविहीन की संज्ञा देते हैं। ज्ञान की प्राप्ति व उसमें स्थिरता हेतु योगयुक्त होना परं आवश्यक है। योगयुक्त वह होता है जो अपने रागादि से मुक्त, निष्काम व निरपेक्ष होकर ईश्वर का सेवक बनकर जीता है। गीता की भूमिका में भगवान् भाष्यकार (आदि शंकराचार्य) ने योग को ज्ञाननिष्ठा योग्यता प्राप्ति लक्षणरूप बताया है।

ज्ञान के लिए गुरुमुख से वेदान्त श्रवण करके अन्तर्मुख होकर आत्मचिन्तन किया जाना चाहिए। जो मन सतत बाह्य विषयों में

आसक्त होकर उसीमें उलजा रहता है, वह पूर्ण उपलब्धता के साथ एकाग्रता से न तो श्रवण कर पाता है और नहीं अन्तर्मुख हो पाता है। ऐसे अशान्त, विक्षिप्त मन से युक्त व्यक्ति की भावना आसक्ति के तंतुओं से अनेकों विषयों में बंटी रहती है। उसकी कहीं किसी वस्तु या व्यक्ति के प्रति भावना प्रतीत होती है तो वह केवल क्षणिक, अस्थायी आसक्तिरूपा, अपने स्वार्थ के लिए ही होती है। ऐसी स्वकेन्द्रिता से युक्त व्यक्ति में न तो ईश्वर के चरणों में भक्ति सम्भव है, भक्ति के अभाव में मन कहीं ऐक स्थान पर स्थिर होकर समाहित ही नहीं हो पाता। ऐसे व्यक्ति में सुख की कोई समीावना नहीं हो सकती है। क्योंकि सुख के लिए मन का शान्त व समाहित होना आपेक्षित है। जो अशान्त है, वह न सुख का अनुभव कर पाता है। उसके लिए आत्मज्ञान के प्रतिफलरूप स्थितप्रज्ञ की अवस्था कल्पना से भी परे होती है। अतः भगवान योगयुक्त होकर जीने के लिए बार-बार प्रेरणा देते हैं।
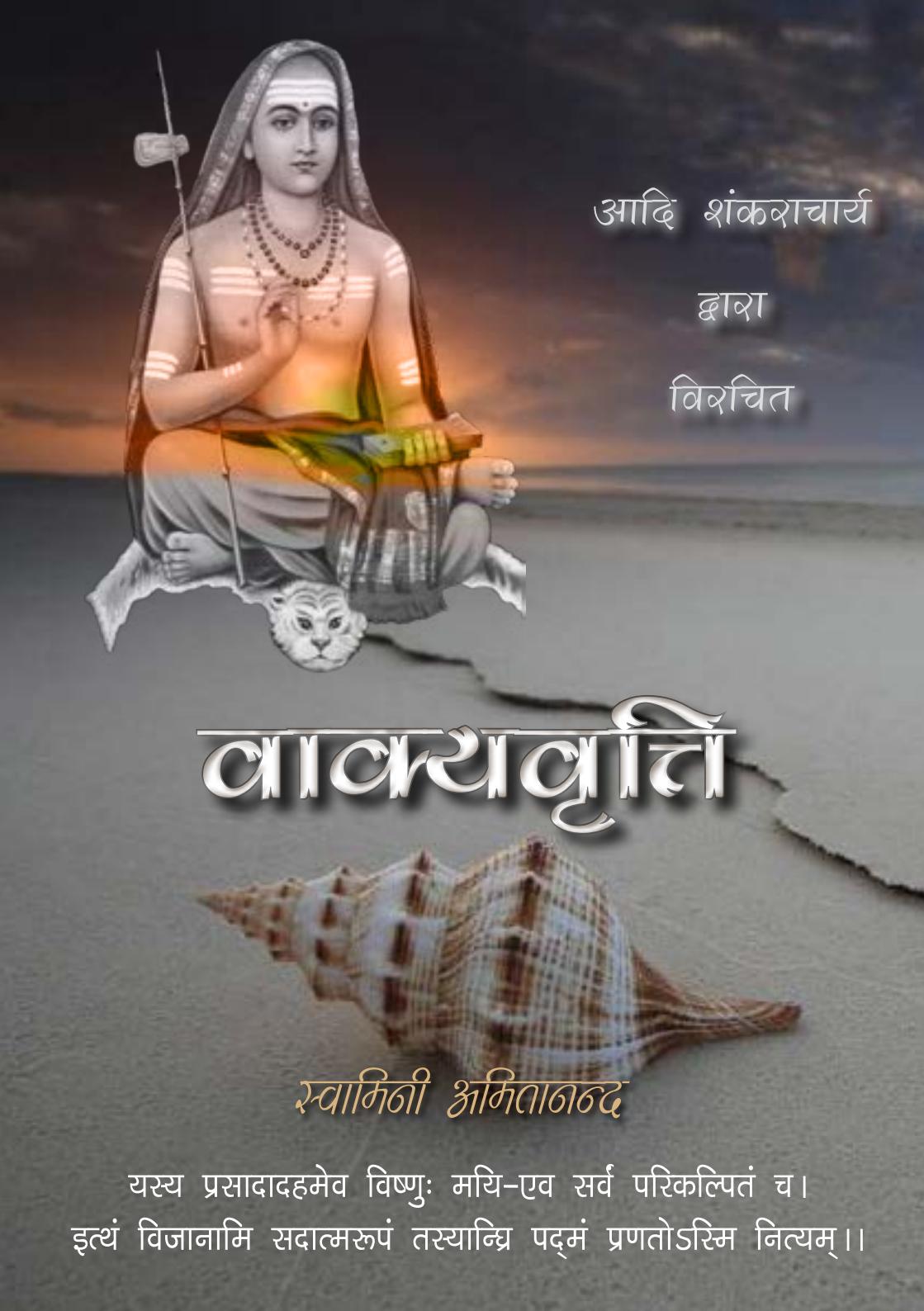
आदि शंकराचार्य

द्वारा

विरचित

वाक्यवृत्ति

स्वामिनी अमितानन्द

यस्य प्रसादादहमेव विष्णुः मयि-एव सर्व परिकल्पितं च।
इत्थं विजानामि सदात्मरूपं तस्याङ्घ्रि पद्मं प्रणतोऽस्मि नित्यम्।।

पदार्थमेव जानामि
नाद्यापि भगवन्स्फुटम्।
अहं ब्रह्मेति वाक्यार्थं
प्रपद्ये कथं वद।।

शिष्य : हे भगवन्! आपके कहने से मैं पदार्थ को जान तो रहा हूं, किन्तु स्पष्ट नहीं जानता। अत: मैं ब्रह्मस्वरूप हूं, इसे किस प्रकार जानूं? इस महावाक्य के अर्थ को आप मुझे अच्छी तरह से समझाएं।

पूर्व श्लोक में आचार्य ने शिष्य के प्रश्न का उत्तर दिया। किन्तु शिष्य पुनः यहां प्रश्न कर रहा है। यह इस वैदिक परम्परा की अपूर्वता और सुन्दरता का सूचक है कि जहां शिष्य को प्रश्न करने का पूरा अधिकार व स्वतंत्रता प्राप्त है। श्रद्धा का अभिप्राय ही यह होता है कि किसी बात को आंख बन्ध करके स्वीकार नहीं किया जाता है। जब तक यह सुनी हुई बात देखी हुई न हो जाए तब तक उस पर मन्थन की प्रक्रिया चलती है। प्रश्नोत्तर शैली इसी मन्थन की प्रक्रिया को दर्शाता है। साथ ही शिष्य की जागरुकता और अधिकारित्व का सूचक है कि वह गुरु की बात को बहुत सजगता और एकाग्रता के साथ न केवल ग्रहण कर रहा है किन्तु उसे आत्मसात करना चाहता है। आत्मसात के अभाव में ज्ञान केवल बौद्धिक रह जाता है जो कि अहं की संतुष्टि का हेतु बनता है। अहं की संतुष्टि से संसरण से मुक्ति नहीं होती है किन्तु संसार के बन्धन को और भी दृढ़ करती है। वेदान्त का अधिकारी वह है कि मुक्ति का इच्छुक है।

आचार्य जब बताते हैं कि तुम ही जीव हो और यह जीव ही मूलरूप से ब्रह्म है। यह सुनकर शिष्य पुनः प्रश्न करता है। वह आचार्य को 'भगवन्' शब्द से सम्बोधित करता है। यह उनकी आचार्य के प्रति दृष्टि का सूचक है। गुरु को ज्ञान की प्रतिमूर्ति और अपनी समस्या के समाधान हेतु समर्थ जान रहा हैं।

शिष्य पूछ रहा है कि, जो आपने 'जीव' शब्द से बताया उस पदार्थ को तो हम जान रहे है, क्योंकि हम ही है। किन्तु सत्य तो यह है कि हम स्वयं को भी स्पष्ट रूप से नहीं जान रहे है। इस समय हम इतना ही जानते है कि हम एक देशादि से संकुचित, व्यक्ति है। उसके अलावा हम अपने बारे में कुछ भी नहीं जान रहे है। दूसरी और आपने कहा कि 'जो तुम पूछ रहे हो, वह 'हम' ही ब्रह्म है।' इस शब्द से तो हम परिचित है। किन्तु हम ब्रह्म को भी वस्तुतः जानते नहीं है। जब हमें इन 'जीव' और 'ब्रह्म' इन

दो पदों का अर्थ ही नहीं पता है तो उसके लक्षित अर्थ को कैसे जान सकते है? इन दो शब्दों के लक्षित अर्थ के ज्ञान के अभाव में इन तत्त्वमसि महावाक्य का अर्थ भी हम कैसे जान सकते हैं? इसलिए आपसे निवेदन है कि इन समस्त शब्दों का क्या अर्थ होता है तथा उसका लक्षित अर्थ क्या है यह हमें स्पष्टतः समझाएं।
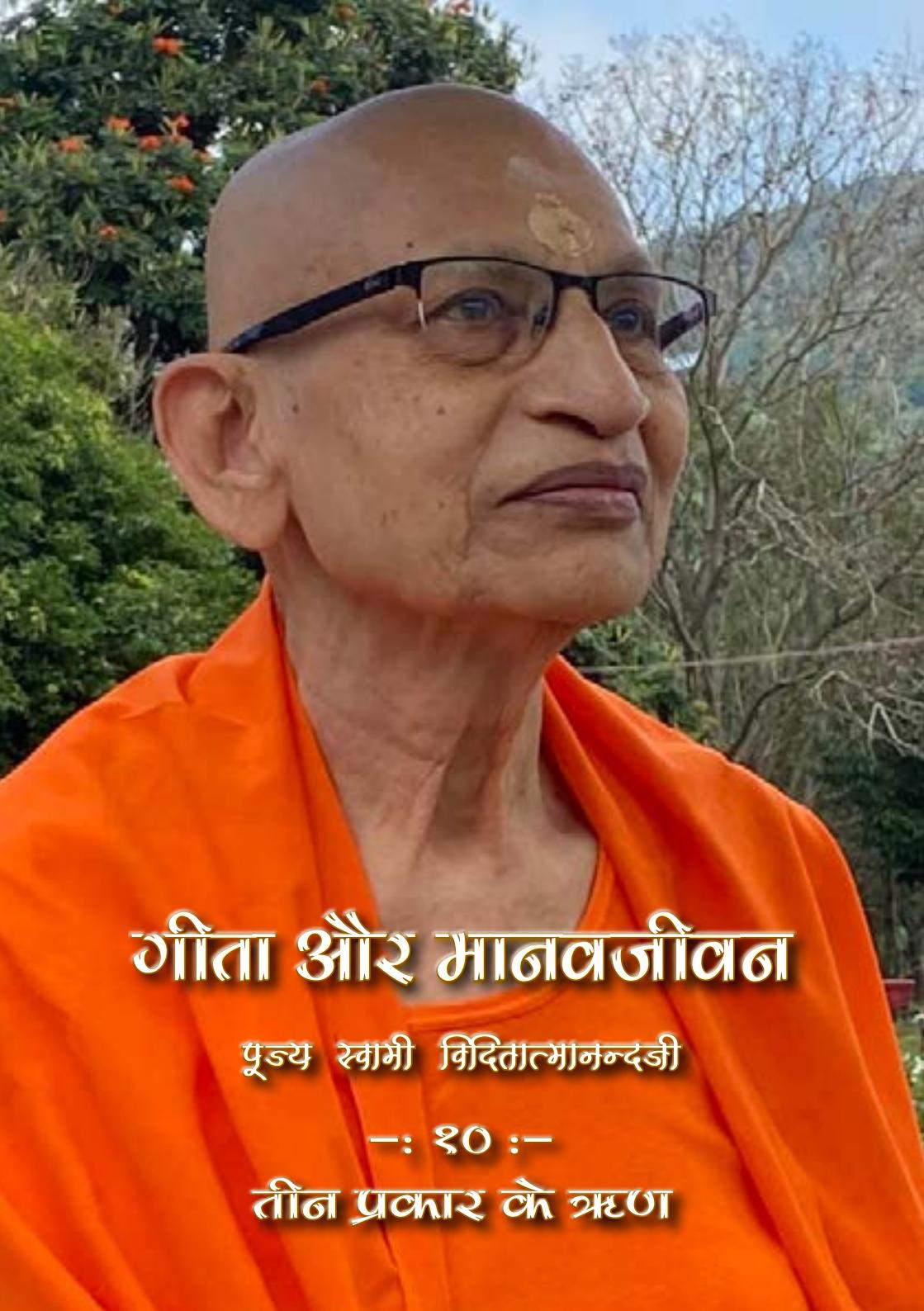
गीता और मानवजीवन
पूज्य स्वामी विदितात्मानन्दजी
-: १० :-
तीन प्रकार के ऋण

गीता और मानवजीवन

मनुष्य जन्म से ही तीन प्रकार के ऋण या कर्जा लेकर जन्मता है - वह है पितृऋण, ऋषिऋण और देवऋण।

प्रत्येक मनुष्य माता-पिता और पूर्वजों का ऋणी है। माता-पिता ने हमें देह प्रदान किया है, इतना ही नहीं किन्तु उसका लालन-पालन करके पाल-पोषकर बड़ा किया है। बालक का विकास करने में कितनी कठिनाई होती है? सन्तान बिमार हुई हो, सतत रोती हो, तब माता को कितनी रातों का जगराता करना पड़ता है। सन्तान बाहर से देरी से आने पर उसको क्या हुआ होगा? इस प्रकार की अनेकों चिन्ताएं माता-पिता ने की होगी, कितने व्यग्र हुए होगें! आज तो बच्चे के देरी से आने पर माता-पिता सहज ही पूछें तो तुरन्त ही गुस्से हो जाते है, 'क्या किट्-किट् करते रहते हैं? क्या होना था? देरी से आएं तो क्या हो गया? मा कहेगी कि, बेटा! आ जाओ! भोजन कर लो' तो उसका तुरन्त ही जवाब मिलता है कि 'हमें भुख नहीं है, हमने बाहर खा लिया है।' माता-पिता

गीता और मानवजीवन

उनकी प्रतीक्षा में भुखे बैठें हो उसकी उसे परवा ही नहीं होती है। इस प्रकार हम बहुत कम ही सोचते है कि हमारी कैसे देख-भाल की होगी!

हम ऋषियों के भी ऋणी है। ज्ञान का जो भण्डार हमारे पास है वह इन ऋषियों के कारण ही है। ऋषिगण अर्थात् हमारे शिक्षक, वैज्ञानिक, तत्त्ववेत्ता, चिन्तक लोग, जिसने ज्ञान प्राप्त करने के लिए, उसे सम्हालने के लिए पूरा जीवन समर्पित कर दिया हो, कितने वैज्ञानिकों ने कितनी खोज करने के लिए कितने-कितने प्रयत्न किए हैं! किसी वस्तु के परीक्षण के लिए वे लोग कईबार खुद पर प्रयोग करते हैं। उसमें कई ने तो अपनी जान भी गंवा दी है। इस प्रकार हजारों वर्षों से कई शिक्षकों ने, आचार्यों ने, चिन्तकों ने, वैज्ञानिकों ने कितना प्रयत्न कर के ज्ञान का यह भण्डार खड़ा किया है, तब हम इस समय विविध ज्ञान प्राप्त कर पाते हैं। आज संस्कृतादि अनेकों भाषाएं खूब सरलता से सीख पाते हैं। और भगवान् शंकराचार्य ने भगवद्-गीता, उपनिषद् पर भाष्य की रचना नहीं की होती तो इन ग्रंथों के रहस्य अपनी समझ में ही नहीं आते।
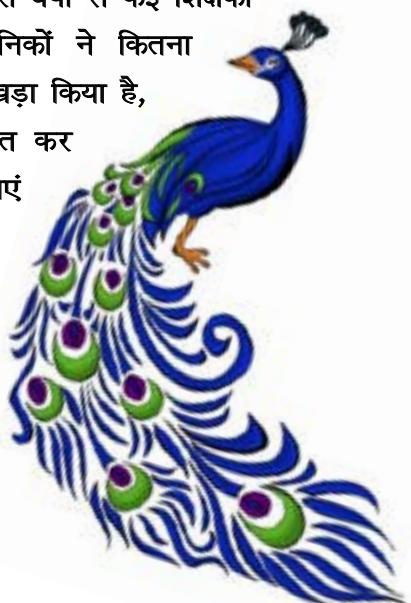
गीता और मानवजीवन

भगवान् वेदवयासजी ने ब्रह्मसूत्र नहीं रचा होता तो उपनिषद् शायद रहस्य ही रह जाते। ऋषियों द्वारा उपनिषद् प्रकट नहीं हुए होते तो हमें जीवन का रहस्य समझ ही नहीं पातें। हम इन सब के ऋणी हैं। अपने कर्म या व्यवहार के समय यह यथार्थ को ध्यान में रखना चाहिए।

तीसरा ऋण है देवऋण, देवताओं का ऋण। देवता अर्थात् जगत का संचालन करनेवाले विविध तत्त्व, विविध योगदान। ये देवता हमारी विविध इन्द्रियों में अंश रूप से निवास करते हैं और उनके अनुग्रह से ही अपने देह के समस्त कार्य होते हैं। वाणी के देवता अग्नि है, अग्नि की कृपा हो तो ही वाणी बोल सकती है। कर्ण के देवता है दिग्देवता। उनकी कृपा से ही शब्द सुन पाते हैं। यह देवतागण मूक रहकर निरन्तर अपनी सेवा करते ही रहते हैं और इसलिए हम उनके भी ऋणी हैं।

इन समस्त ऋण को ध्यान में रख कर ही हम अपने कर्म या व्यवहार करें।

— ४४ —

गंगोत्री
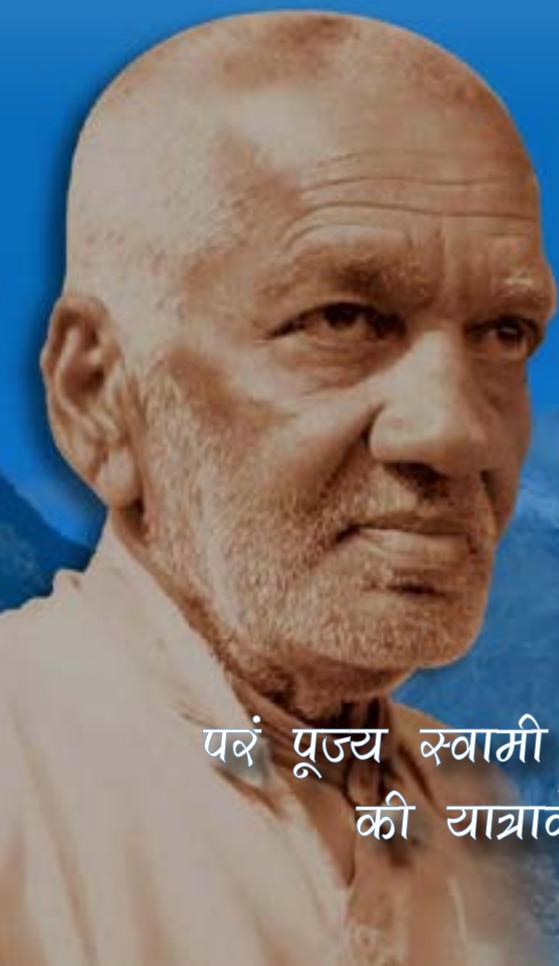
परं पूज्य स्वामी तपोवन महाराज
की यात्राके संस्मरण

जीवन्मुक्त

दो पहर बीत रही थी और दो बज गये थे। भाद्रपद, अश्विन के महीनों में यहां यद्यपि मैदानों की तरह भयंकर गर्मी तो नहीं पडती है, तो भी आठ़ हजार फुट की उंचाईवाले पर्वतखण्डों पर काफी तेज धूप पडती है। दिन होने के कारण रींछ आदि वन्य पशु अपने अपने निवासस्थानों में आराम करते होंगे। चूंकि पास कोई गांव नही है; इसलिए गायें आदि ग्रामीण पशु भी दिखायी नहीं देते है। यद्यपि हिमालय के विचित्र कौए इधर-उधर उड रहे हैं तो भी दूसरे कुछ मोहन पक्षीविशेष पेट़ के भर जाने के कारण निश्चिंत होकर वृक्षों की शाखाओं पर बैठे विश्रान्ति सुख का अनुभव कर रहे है। दोपहर का खाना खाकर हाथ में हंसिया लिये उंची आवाज में सुन्दर गीत गाती हुई पहाडी वनिताएं उल्लसित होकर अपने दूर के खेतों की

ओर चली जा रही है। भांति भांति के शस्यों से समृद्ध ये खेत अति रमणीय तथा हृदय-आह्लादकारी है। इन वनिताओं को छोडकर उस समय कोई भी उस प्रदेश की निर्जनता तथा निःशब्दता को भंग नही करता। मनुष्य से लेकर पक्षी तक सब प्राणियों को यह पर्वत नित्य प्रति निरंतर अन्न-जल देता है, और उल्लास तथा वात्सल्य के साथ उनका पालन-पोषण करता है। उस जगत्पिता विश्वम्भर के इस सामर्थ्य के बारे में सोचकर मैं प्रायः आनन्दित हो जाया करता हूं। ज्यों ज्यों यह सोचता हूं कि सर्वदा हिम से ढके हुए हिमाद्रि शिखरों की गुफाओं में रहनेवाले पशु-पक्षियों को भी भगवान् प्रतिदिन खाना देकर उनका पेट आसानी से भर देते है, त्यों त्यों मेरा विस्मय बढता ही जाता है।
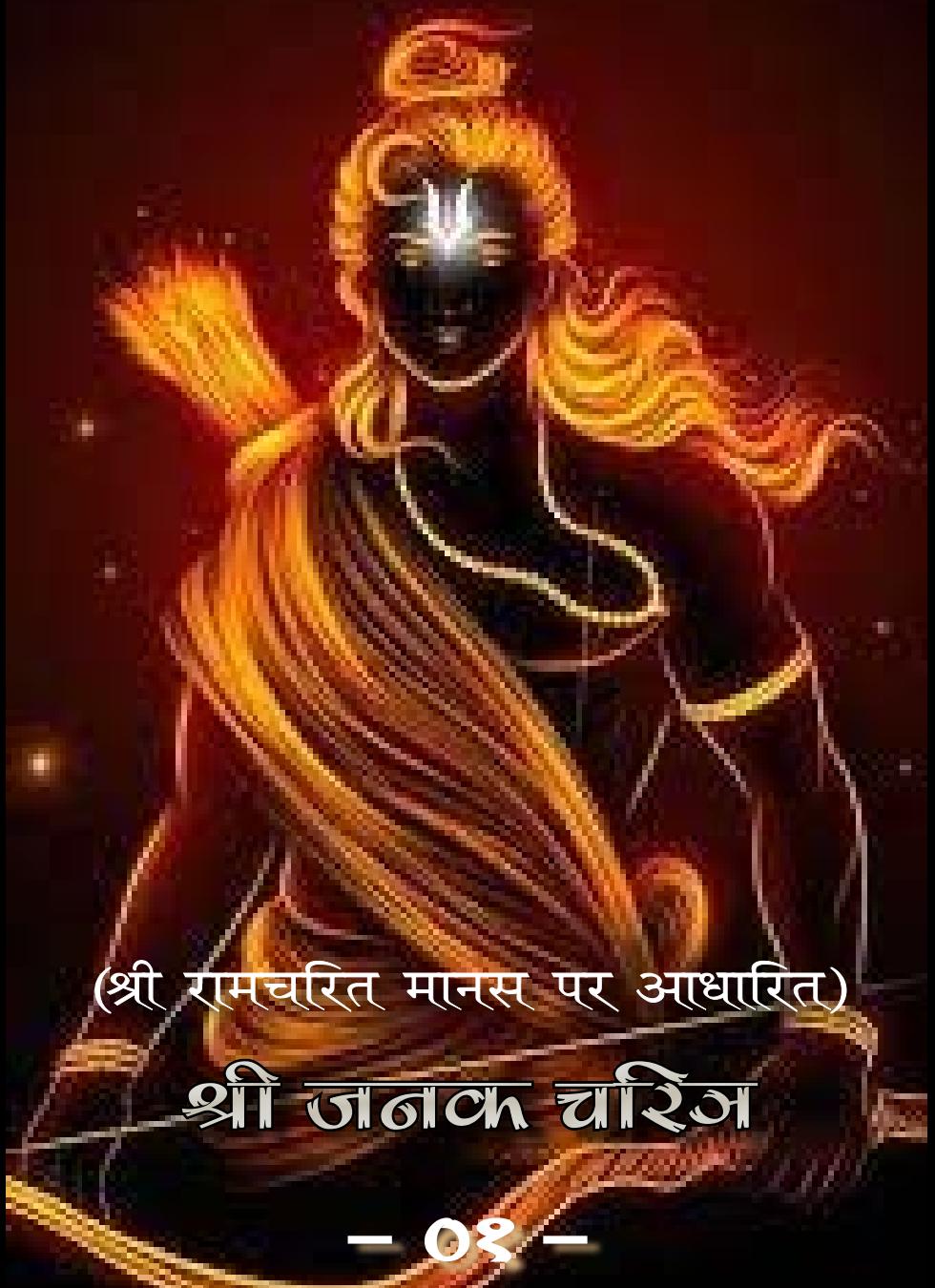
(श्री रामचरित मानस पर आधारित)
श्री जनक चरित्र
– ०१ –
प्रनवउं परिजन सहित विदेहू।
जाहि राम पद गूढ सनेहू।।

श्री जनक चरित्र

वस्तुतः मानस का समग्र दर्शन जिन पात्रों में साकार होता है, उनमें महाराजा जनक अन्यतम हैं। मानस की मान्यता यह है कि भक्ति और भगवत् प्रेम के अभाव में ज्ञान और कर्म दोनों ही अपूर्ण है। मानस की मान्यता केवल आग्रह या हठ़ पर आधारित नहीं है। वह समझ में आ सकने वाला बुद्धिसंगत तथ्य है। एक समग्र व्यक्ति का स्वरूप क्या है? वेदान्त के मिथ्यात्व का आग्रह यदि व्यक्ति की आसक्ति को कम करता है तो वह आवश्यक और श्लाघनीय है, क्योंकि आसक्ति की अधिकता से व्यक्ति स्वयं अपने लिए तो दुःख की सृष्टि करता ही है, साथ ही दूसरों के लिए भी समस्या बन जाता है। सृष्टि को सर्वथा सत्य मानकर व्यक्ति जब उसके संग्रह में जुट जाता है, तब वह दूसरों का भाग हड़प जाने या उस पर येन-केन प्रकारेण अधिकार करने का प्रयास करता है। इससे समाज में स्वार्थ का संघर्ष प्रारम्भ हो जाता है। स्वयं इन पर अधिकार चाहनेवाला व्यक्ति भी सुखी नहीं रह पाता। वह चाहकर भी इन पर शाश्वत अधिकार नहीं बनाए रख सकता। फिर भी इन वस्तुओं की उपलब्धि के पश्चात् वह जिस

प्रकार के सुख-सन्तोष की कल्पना करता है, वह सार्थक सिद्ध नहीं होती। अतः मिथ्यात्व का ज्ञान इस आसक्ति को कम करे ऐसा स्वाभाविक प्रतीत होता है। पर इस मिथ्यात्व के आग्रह से पलायन की प्रवृत्ति भी उत्पन्न हो सकती है। इस तमोमयी प्रवृत्ति से प्रेरित अनेकों व्यक्ति जीवन से भागकर भी स्वयं को श्रेष्ठ मानने का अहंकार पाल लेते है। अपनी सब से बड़ी कायरता को ही वे अपनी सब से बड़ी वीरता का प्रमाण मानने की भूल कर बैठते हैं। महाभारत के युद्ध में अर्जुन इसी प्रकार की प्रवृत्ति से परिचालित होने जा रहा था। यह अपनी भावनाजन्य दुर्बलता को दया के रूप में देखता है और स्वयं को स्वार्थ से उपर उठ़ा हुआ व्यक्ति मानकर यह कल्पना कर बैठता है कि वह अपने प्रतिद्वन्द्वियों की तुलना में कितना श्रेष्ठ है। अपने प्रतिपक्षियों को 'लोभोपहत चेतसः' कहकर उनकी निन्दा करता है। पर श्रीकृष्ण उसकी भावनाओं को कायरता से प्रेरित कहकर उसे युद्ध की प्रेरणा देते हैं।

वे स्पष्ट कर देते हैं कि उसे कर्म का पालन करना चाहिए। कर्म के द्वारा उत्पन्न होनेवाली समस्याओं के समाधान के लिए वे अर्जुन को निष्काम कर्म का उपदेश देते हैं 'व्यक्ति को केवल कर्म करने का अधिकार है। फल का नहीं। अतः फलाकांक्षा से प्रेरित होकर कर्म न करो।' निष्काम कर्मयोग का उपदेश वे अनेका रूपों में करते हैं।

कथा / प्रसंग

भक्तराज हनुमान

भक्तराज हनुमान

श्रीराम लंका पर विजय प्राप्त करके सीताजी एवं लक्ष्मणजी के साथ अयोध्या लौटें। इस विजय यात्रा में जिन-जिनने योगदान दिया था, उन सबके प्रति धन्यता व कृतज्ञता की अभिव्यक्ति हेतु एक भव्य समारोह आयोजित किया गया। इस समारोह में प्रत्येक वानर-भालु आदि को विशेष-विशेष उपहार से अलंकृत किया जा रहा था। यह सर्वविदित है कि इस विजययात्रा में हनुमानजी का अत्यधिक महत्वपूर्ण योगदान रहा था। अतः सीतामाता को विशेष जिज्ञासा थी कि प्रभु उन्हें कैसे उपहार से अलंकृत करेंगे?

किन्तु यह समारोह का समापन भी होने लगा, अभी तक प्रभु ने हनुमानजी की और देखा तक नहीं। हनुमानजी प्रभु को चंवर डुलाने में व्यस्त थे। यह देखकर सीतामाता को पसंद नहीं आया। अतः स्वयं उन्होंने हनुमानजी को समीप बुलाकर अपने कण्ठ से अत्यन्त मूल्यवान माला नीकालकर हनुमानजी को भेंट किया। हनुमानजी ने

भक्तराज हनुमान

उसे सिर-आंखों पर लगाकर प्रणाम किया। उसके पश्चात् उसे घूमा-घूमाकर देखने लगें। सीतामाता उनकी यह चेष्टा बहुत ही वात्सल्य के साथ निहार रही थी। उतने में हनुमानजी ने मालाको तोड़ा। सीताजी उससे आश्चर्यचकित रह गई और देखा कि एक-एक मोती को दांतों के तले दबा-दबाकर उसे तोड़ रहे हैं, और एक-एक को बहुत ही गौर से देखकर उसे फेंक रहे हैं।

सीताजी यह देखकर सोचने लगी कि इतनी मूल्यवान माला दी गई और उसे ये हनुमानजी तोड़कर उसमें क्या देख रहे है? अब उनसे रहा नहीं गया, और उन्होंने हनुमानजी से पूछ लिया कि, 'हे हनुमान! हमने इतनी मूल्यवान माला आपको उपहार के रूप में भेंट की और आपने उसे तोड़ दी और अब उसके एक-एक मोती को भी तोड़कर देख रहे है? लगता है आप कुछ खोज रहे है? हम यह जानना चाहते है।

यह सुनकर हनुमानजी ने कहा कि, ' माते! आपके द्वारा उपहार दिया गया है तो कुछ विशेष ही होगा। इसलिए हम उसमें हमारे राम को खोज रहे हैं। किन्तु आश्चर्य! हमारे राम

हमें इसमें कहीं भी नहीं दीख रहे हैं। ऐसा कहकर हनुमानजी ने अपने सीने को चिरकर दिखाया, जिसमें श्रीराम सीताजी एवं लक्ष्मण समेत विराजमान दीखें।

हनुमानजी की यह चेष्टा एक जीव की चेष्टा है। जीवन सीतारूपा माया के द्वारा प्रदत्त अनुभवरूपी मोतियों की माला है। हर जीव मूलरूप से आनन्दस्वरूप श्री राम की खोज करता हैं। किन्तु इन बाह्य अनुभूतियों में कभी शाश्वत सुख रूप राम को पा नहीं सकता है। जिस समय अन्तर्मुख होकर अपनी हृदयगुहा में देखता है, तब अपने शान्तिस्वरूपा सीताजी के साथ आत्मस्वरूप से उन्हें पा लेता है।

Mission & Ashram News

Bringing Love & Light
in the lives of all with the
Knowledge of Self

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

गीता अध्याय - 15 / पुरूषोत्तम योग

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

भजन- आनन्द

आश्रम / मिशन समाचार

श्री गंगेश्वर महादेव पूजन

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

महाशिवरात्री पूजा
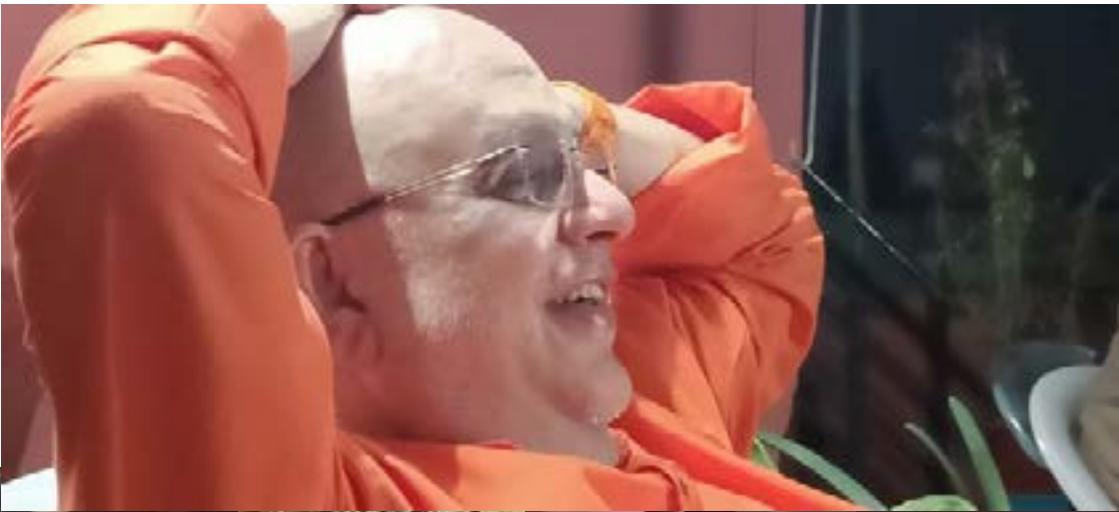
आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

भजन एवं स्तोत्रपाठ

आश्रम / मिशन समाचार

देवास-चामुण्डा देवी दर्शन यात्रा

उड़न खटोले में...

आश्रम / मिशन समाचार

तुलजा भवानी मन्दिर

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

होलिका दहन पूजा

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

होलिका दहन एवं पूजन

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

श्रीमद् भगवद् गीता

(शांकर भाष्य समेत) नित्य कक्षाएं

प्रतिदिन प्रातः 7.30 बजे से (मंगल से शनिवार)

वेदान्त आश्रम, इन्दौर

पूज्य गुरुजी स्वामी आत्मानन्दजी

INTERNET NEWS

Talks on (by P. Guruji) :

Video Pravachans on YouTube Channel

(☝ Click here)

GITA / UPANISHAD/ PRAKARAN GRANTHAS

SUNDARKAND / HANUMAN CHALISA

SHIV MAHIMNA STOTRAM / CHANTING

MORAL STORIES ETC

Audio Pravachans (☜ Click here)

GITA / UPANISHAD/ PRAKARAN GRANTHAS

Vedanta Ashram YouTube Channel

Vedanta & Dharma Shastra Group

Monthly eZines

Vedanta Sandesh - Apr '24

Vedanta Piyush - Mar '24